



ए.एफ.आर.

उच्च न्यायालय छत्तीसगढ़, बिलासपुर
रिट याचिका (दांडिक) क्रं.- 472/2021

लखन लाल पटेल, आत्मज-स्वर्गीय श्री ओमकार पटेल, आयु लगभग 40 वर्ष, व्यवसाय-नगर निरीक्षक-पुलिस (वर्तमान में नगर निरीक्षक के पद पर थाना कटघोरा में पदस्थ), निवासी-डी-9, बालको, कोरबा, जिला-कोरबा, छत्तीसगढ़।

----- **याचिकाकर्ता**

विरुद्ध

1. छत्तीसगढ़ राज्य द्वारा सचिव, गृह विभाग, नया रायपुर, मंत्रालय, जिला-रायपुर, छत्तीसगढ़।
2. पुलिस महानिरीक्षक, बस्तर रेंज, लालबाग, जगदलपुर, जिला-बस्तर, छत्तीसगढ़।
3. वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक, जगदलपुर, जिला-बस्तर, छत्तीसगढ़।

----- **उत्तरदातागण**

याचिकाकर्ता की ओर से : श्री शशांक ठाकुर, अधिवक्ता।
 राज्य/उत्तरदाता(गण) की ओर से : श्री सौम्य राय, पैनल अधिवक्ता।

एवं

रिट याचिका (दांडिक) क्रं.-132/2021

प्रमोद श्रीवास्तव, आत्मज-स्वर्गीय पी. एन. श्रीवास्तव, आयु लगभग 51 वर्ष, व्यवसाय-नौकरी, उप निरीक्षक-पुलिस, वर्तमान में चौकी प्रभारी के रूप में थाना-पद्मनाभपुर, जिला-दुर्ग, छत्तीसगढ़ में पदस्थ।

----- **याचिकाकर्ता**

विरुद्ध

1. छत्तीसगढ़ राज्य द्वारा सचिव, गृह विभाग, नया रायपुर, मंत्रालय, जिला-रायपुर, छत्तीसगढ़।
2. पुलिस महानिरीक्षक, बस्तर रेंज, लालबाग, जगदलपुर, जिला-बस्तर, छत्तीसगढ़।
3. वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक, जगदलपुर, जिला-बस्तर, छत्तीसगढ़।

----- **उत्तरदाता(गण)**

याचिकाकर्ता की ओर से : श्री अनिल एस. पांडेय, अधिवक्ता।
 राज्य/उत्तरदाता(गण) की ओर से : श्री सौम्य राय, पैनल अधिवक्ता।



माननीय न्यायमूर्ति श्री संजय के. अग्रवाल

माननीय न्यायमूर्ति श्री राकेश मोहन पांडेय

आदेश बोर्ड से पारित

(13.01.2023)

संजय के. अग्रवाल, न्या.

1. चूंकि दोनों रिट याचिकाओं में तथ्यों और विधि का प्रश्न एक समान है, इसलिए, उन्हें एक साथ सुना गया और इस आदेश द्वारा इनका एक साथ अभिनिर्धारण किया जा रहा है।
2. याचिकाकर्ता(गण) प्रमोद श्रीवास्तव और लखन लाल पटेल दोनों थाना-सिटी कोतवाली, जगदलपुर में दर्ज धारा 420, 467, 468 और 471 भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत अपराध की जांच में शामिल थे और आरोपी अमृत लाल पैकरा के विरुद्ध न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, बस्तर, जगदलपुर के समक्ष अपराध क्र.- 498/2013 में अभियोग-पत्र प्रस्तुत किया गया था। तदनुसार, उक्त न्यायालय द्वारा विचारण प्रारम्भ किया गया और अंततः न्यायालय के निर्णय दिनांक 20.06.2019 द्वारा आरोपी अमृत लाल पैकरा को संदेह का लाभ प्रदान कर उपरोक्त अपराधों से दोषमुक्त कर दिया। यद्यपि, निर्णय की कण्डिका-26 में विद्वान न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी द्वारा दोनों याचिकाकर्तागण के विरुद्ध कुछ प्रतिकूल टिप्पणियां की गई हैं, जिसके आधार पर, उनके विरुद्ध दूषित जांच हेतु एक संयुक्त विभागीय जांच अनुलग्नक-पी/5 के अंतर्गत प्रारम्भ की गई थी, जिसे इन रिट याचिकाओं के माध्यम से चुनौती दी गई है।
3. रिट याचिकाओं का विरोध करते हुए जवाब प्रस्तुत किया गया है जिसमें कहा गया है कि की गई टिप्पणियां विधि के अनुसार हैं।
4. संबंधित याचिकाकर्ता(गण) की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अनिल एस पांडेय एवं श्री शशांक ठाकुर ने कथन किया है कि विद्वान विचारण मजिस्ट्रेट द्वारा यह कहते हुए याचिकाकर्तागण के विरुद्ध प्रतिकूल टिप्पणी करना उचित नहीं था कि,



उन्होंने अपने कर्तव्यों का पालन करते समय लापरवाही बरती और तो और उनके विरुद्ध प्रतिकूल टिप्पणियां करने से पूर्व सुनवाई का कोई अवसर प्रदान नहीं किया। उनके द्वारा माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायदृष्टांत राज्य (एन.सी.टी. दिल्ली) बनाम पंकज चौधरी और अन्य¹ में पारित निर्णय का अवलंब लिया गया और कथन किया गया है कि आक्षेपित निर्णय की कण्डिका-42 और 43 में याचिकाकर्तागण के विरुद्ध प्रतिकूल टिप्पणियां को हटाई जानी चाहिए क्योंकि अनुलग्नक पी-5 के द्वारा याचिकाकर्तागण के विरुद्ध विभागीय जांच शुरू की गई है।

5. राज्य की ओर से विद्वान अधिवक्ता श्री सौम्य राय का कथन है कि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित यह निष्कर्ष कि, याचिकाकर्तागण ने अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने में लापरवाही बरती, तथ्य का सही निष्कर्ष है, इसलिए, याचिकाकर्तागण को कोई अनुतोष प्रदान नहीं किया जा सकता है।

6. हमने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना, उनके द्वारा ऊपर प्रस्तुत परस्पर विरोधी कथनों पर विचार किया तथा अभिलेख का परिशीलन अत्यंत सावधानी पूर्वक किया।

7. यह निर्विवादित है कि याचिकाकर्तागण समय-समय पर अपराध क्रमांक-498/2013 की जांच में शामिल थे तथा अभियुक्त अमृत लाल पैकरा के विरुद्ध चालान प्रस्तुत किया गया था और विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा उसे अपराध से दोषमुक्त करते हुए कण्डिका-26 में टिप्पणी की गई थी कि उन्होंने लापरवाही बरती एवं जांच करने में सजग नहीं रहे हैं। कण्डिका-26 निम्नानुसार उद्धृत किया गया है:-

“26 घटना दिनांक को आरोपी किस हैसियत से संग्रहालय जगदलपुर में पदस्थ था वह संग्रहाध्यक्ष था या नहीं, यह प्रमाणित नहीं है। कलेक्टर एवं सीईओ जनपद फरसगांव के जांच प्रतिवेदन के आधार पर जे.आर. भगत द्वारा जांच कर कलेक्टर के निर्देश पर प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करायी गयी है किंतु कलेक्टर एवं सीईओ की उक्त जांच प्रतिवेदन को अनुसंधान अधिकारी द्वारा जप्त ही नहीं किया गया है, न ही उसे न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया है जो कि अनुसंधान अधिकारी की गंभीर लापरवाही है, जिन 7 मजदूरों

1 (2019) 11 SCC 575



के संबंध में उनके द्वारा साफ सफाई करना व्यक्त करते हुए राशि आहरित की गयी है वे 7 मजदूर वास्तविक अस्तित्व में है या नहीं इसके संबंध में साक्ष्य का नितांत अभाव है तथा अनुसंधान अधिकारी द्वारा तत्संबंध में भी कोई जांच नहीं की गयी है। पंचनामा प्र. प्री. 7 के साक्षी चंद्रहास मरकाम, संतु राम मरकाम, लक्ष्मण सिंह दीवान तीनों ने ही इस बात की पुष्टि नहीं किया है कि घटना दिनांक 01/02/2012 से 10/02/2012 के मध्य भोगापाल स्थित बुद्धदेव की प्रतिमा की साफ सफाई नहीं करायी गयी थी।"

8. बहुत पहले वर्ष 1964 में, माननीय उच्चतम न्यायालय के संविधान पीठ द्वारा उत्तर प्रदेश राज्य बनाम मोहम्मद नईम² के मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि उच्च न्यायालय अपनी अंतर्निहित अधिकारिता का प्रयोग करते हुए अपने या किसी अधीनस्थ न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों को हटा सकता है यदि न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग को रोकने हेतु या अन्यथा, न्याय के उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु ऐसा करना आवश्यक हो एवं न्यायालय द्वारा निम्नानुसार मत व्यक्त किया गया था:—

"9. हम समझते हैं कि कि बम्बई उच्च न्यायालय सही है और उच्च न्यायालय अपनी अंतर्निहित अधिकारिता का प्रयोग करते हुए उसके द्वारा या किसी अधीनस्थ न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों को हटा सकता है यदि न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग को रोकने हेतु या अन्यथा इसके उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु ऐसा करना आवश्यक हो; तो यह अधिकारिता असाधारण प्रकृति का है और इसका प्रयोग केवल आपवादिक मामलों में ही किया जाना चाहिए।"

9. माननीय न्यायाधिपति(गण) द्वारा, उन व्यक्तियों या प्राधिकारियों के विरुद्ध की गई अपमानजनक टिप्पणियों के हटाये जाने पर विचार करने हेतु भी एक जांच का मानदंडों(टेस्ट) निर्धारित किया गया है, जिनका आचरण विचार हेतु न्यायालय के समक्ष आता है, जिसका निर्धारण उनके द्वारा संक्षिप्त में निम्नानुसार किया जाना चाहिए :—

(क) क्या वह पक्षकार(व्यक्ति) जिसका आचरण प्रश्नगत है, वह न्यायालय के समक्ष है या उसके पास स्वयं के विषय में सफाई देने या बचाव करने का अवसर है?



(ख) क्या टिप्पणियों को न्यायसंगत (सही) ठहराने वाले उस आचरण से संबंधित कोई साक्ष्य अभिलेख पर उपलब्ध है; तथा

(ग) क्या इसके अभिन्न अंग के रूप में प्रकरण के निर्धारण हेतु यह आवश्यक है कि उस आचरण पर ध्यान दिया जाए। यह भी माना गया है कि न्यायिक निर्णय(न्याय दृष्टान्त) न्यायिक प्रकृति के होने चाहिए एवं साधारणतया इसे निष्कपटता, उदारता एवं आत्मसंयमता से विचलित नहीं होना चाहिए।"

10. इसी प्रकार, डॉ रघुबीर सरन बनाम बिहार राज्य के मामले³ में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि उच्च न्यायालय के पास अपरिचित के विरुद्ध अधीनस्थ न्यायालय के निर्णय और आदेश में की गई आपत्तिजनक टिप्पणियों को हटाने की अंतर्निहित शक्ति है, जब निर्णय व आदेश अंतिम (फाइनल) हो गया हो तथा माननीय न्यायालय द्वारा निम्नानुसार सिद्धांतों को प्रतिपादन किया गया है:-

"7-8. उपर्युक्त विवेचना से निम्नलिखित सिद्धांत उभर कर सामने आते हैं:-

(1) दंडिक न्यायालय का निर्णय अंतिम होता है; इसे केवल विधि द्वारा विहित रीति से अपास्त या संशोधित किया जा सकता है।

(2) प्रत्येक न्यायाधीश को, पदानुक्रम में उसका पद (रैंक) जो भी हो, बिना किसी भय या पक्षपात के किसी भी मामले में अपने विचार व्यक्त करने का अप्रतिबंधित अधिकार होना चाहिए।

(3) किसी न्यायाधीश का यह सह-सापेक्ष और स्व-निर्धारित कर्तव्य है कि वह बिना किसी आधार के अप्रासंगिक टिप्पणी या मत अभिव्यक्त न करे, विशेष रूप से ऐसे साक्षियों या पक्षकारों के प्रकरण में जो उसके समक्ष उपस्थित नहीं हैं, जो उनके चरित्र या प्रतिष्ठा को प्रभावित करते हैं।

(4) एक अपीलीय न्यायालय के पास ऐसी टिप्पणियों को न्यायिक रूप से सही करने की अधिकारिता है, किंतु यह केवल आपवादिक मामलों में ऐसा करेगी जहां ऐसी टिप्पणियों से किसी साक्षी या उसके समक्ष उपस्थित न होने वाले किसी पक्षकार को अप्रतिसंहरणीय क्षति कारित होगी।

29. जब किसी विशिष्ट प्रकरण में उच्च न्यायालय के समक्ष यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या ऐसी अपरिभाषित शक्ति का आश्रय(सहारा) लेना है तो उसके लिए अत्यधिक सावधानी और सतर्कता बरतना आवश्यक है? इस प्रकार जब किसी व्यथित पक्षकार द्वारा अधीनस्थ न्यायालय के आदेश या निर्णय से किसी भी अंश को हटाने के लिए यह कदम उठाया जाता है, तो



उसे पूरी तरह से संतुष्ट होना चाहिए कि शिकायत किया गया अंश पूरी तरह से अप्रासंगिक और अनुचित है, कि अभिलेखों पर इसे यथावत रखने से उस व्यक्ति को गंभीर नुकसान कारित होगा जिसे व्यक्ति के संदर्भ में यह है और यह कि, इसके हटाए जाने से निर्णय या आदेश के कारणों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।"

11. इसी प्रकार, निरंजन पटनायक बनाम शशिभूषण कर⁴ के मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि उन व्यक्तियों और प्राधिकारियों के विरुद्ध कठोर या अपमानजनक टिप्पणियां नहीं की जानी चाहिए, जिनके आचरण न्यायालय के समक्ष विचार हेतु आता है जब तक कि यह प्रकरण के विनिश्चय के लिए वास्तव में आवश्यक न हो और मोहम्मद नईम (पूर्वोक्त) के प्रकरण में माननीय उच्चतम न्यायालय के न्याय दृष्टांत का अवलंब लेते हुए निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया:—

"24. अतः, यह स्थापित विधि है कि उन व्यक्तियों और प्राधिकारियों के विरुद्ध कठोर या अपमानजनक टिप्पणी नहीं की जानी चाहिए जिनके आचरण न्यायालयों के समक्ष विचार करने हेतु आता है जब तक कि प्रकरण के विनिश्चय हेतु उस आचरण पर ध्यान देना उसके अभिन्न अंग के रूप में वास्तव में आवश्यक न हो। हमारा मानना है कि अपीलार्थी के विरुद्ध की गई प्रतिकूल टिप्पणियां न तो उचित थीं और न अपेक्षित।"

12. आर. के. लक्ष्मणन बनाम ए. के. श्रीनिवासन⁵ के मामले में भी ऐसा ही मत प्रतिपादित किया गया है, जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा मोहम्मद नईम (पूर्वोक्त) में प्रतिकूल टिप्पणियों को हटाने के लिए निर्धारित मानदंडों (टेस्ट) का पालन किया है।
13. ए. एम. माथुर बनाम प्रमोद कुमार गुप्ता⁶ वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने न्यायिक संयम की आवश्यकता पर बल दिया है और यह अभिनिर्धारित किया है कि न्याय के सुव्यवस्थित प्रशासन हेतु न्यायिक संयम और अनुशासन आवश्यक है तथा निम्नानुसार मत व्यक्त किया है:—

4 (1986) 2 SCC 569

5 (1974) 2 SCC 566

6 (1990) 2 SCC 533



“13. न्याय के व्यवस्थित प्रशासन के लिए न्यायिक संयम और अनुशासन उतना ही आवश्यक है जितना कि वे सेना की प्रभावशीलता के लिए हैं। संयम का कर्तव्य, कार्य की यह विनम्रता हमारे न्यायाधीशों का निरंतर विषय होना चाहिए। निर्णय लेने में यह गुण न्यायाधीशों के लिए, सम्मान प्राप्त करने के लिए, उतना ही आवश्यक है जितना कि यह न्यायपालिका की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए है। इस परिप्रेक्ष्य में न्यायिक संयम को न्यायिक सम्मान कहा जा सकता है, अर्थात् न्यायपालिका द्वारा सम्मान। न्यायालय के साथ-साथ राज्य की अन्य समन्वय शाखाओं, कार्यपालिका और विधायिका के समक्ष आने वाले उन लोगों के प्रति सम्मान। एक-दूसरे के प्रति सम्मान होना चाहिए। जब ये गुण विफल हो जाते हैं या जब वादी और जन साधारण को लगता है कि न्यायाधीश इन गुणों में विफल रहा है, तो यह न तो न्यायाधीश के लिए अच्छा होगा और न ही न्यायिक प्रक्रिया के लिए।”

14. माननीय न्यायाधीश(गण) ने आगे यह निष्कर्षित किया है कि न्यायाधीशों द्वारा असंयमित टिप्पणियां नहीं की जानी चाहिए तथा उनके द्वारा निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया है:-

“14. एक न्यायाधीश का न्यायपीठ शक्ति का स्थान है। न्यायाधीशों के पास न केवल बाध्यकारी निर्णय लेने की शक्ति है, बल्कि उनके निर्णय अन्य अधिकारियों द्वारा शक्ति के उपयोग को भी वैध ठहराते हैं। न्यायाधीशों का न्यायालय के कार्यक्षेत्र पर पूर्ण और निर्विवाद नियंत्रण होता है। लेकिन वे बेतुकी टिप्पणियों, अमर्यादित बयानबाजी या अधिवक्ताओं, पक्षों या गवाहों की तीखी आलोचना करके अपने अधिकार का दुरुपयोग नहीं कर सकते। हम स्वीकार करते हैं कि न्यायालय के पास न्यायनिर्णयन के लिए अपने समक्ष आने वाले किसी भी मामले पर अपनी दोषसिद्धि पर स्वतंत्र रूप से कार्य करने की अंतर्निहित शक्ति है, लेकिन न्याय के उचित प्रशासन के लिए यह सर्वोच्च महत्व का एक सामान्य सिद्धांत है कि उन व्यक्तियों या प्राधिकारियों के विरुद्ध अपमानजनक टिप्पणी नहीं की जानी चाहिए जिनके आचरण पर विचार किया जाता है जब तक कि मामले के निर्णयन के लिए उनके आचरण पर ध्यान देना बिल्कुल आवश्यक न हो।”

15. मोनीश दीक्षित बनाम राजस्थान राज्य⁷ के प्रकरण में, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध निंदात्मक टिप्पणियां नहीं की जानी चाहिए और न्यायालय से यह अपेक्षित है कि वह प्रस्तावित



टिप्पणियां या आलोचनाओं के संबंध में प्रकरण में सुनवाई का अवसर प्रदान करे जिसकी मूल रूप से आवश्यकता है अन्यथा आपत्तिजनक टिप्पणियां प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन होगी और न्यायालय द्वारा निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया है:-

“43. इसके अतिरिक्त, इस न्यायालय ने बार-बार चेतावनी दी है कि किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध न्यायालय द्वारा कोई भी अपमानजनक टिप्पणी करने से पूर्व, विशेष रूप से जब ऐसी टिप्पणी संबंधित व्यक्ति के भविष्य के व्यवसाय (करियर) पर गंभीर परिणाम ला सकती है, तो उसे प्रस्तावित टिप्पणियों या आलोचनाओं के संबंध में प्रकरण में सुनवाई का अवसर दिया जाना चाहिए था। इस तरह का अवसर बुनियादी जरूरत है, अन्यथा अपमानजनक टिप्पणी प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन होगा। इस प्रकरण में अ.सा.-30 (देवेंद्र कुमार शर्मा) को ऐसा अवसर नहीं दिया गया था।”

16. प्रकाश सिंह तेजी बनाम नॉर्दर्न इंडिया गुड्स ट्रांसपोर्ट कंपनी प्राइवेट लिमिटेड⁸ के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि प्रतिकूल टिप्पणियां तब तक नहीं की जानी चाहिए जब तक कि प्रकरण के विनिश्चय के लिए यह आवश्यक न हो और संबंधित अधिकारी को अपना स्पष्टीकरण देने का अवसर दिया जाना चाहिए तथा न्यायालय द्वारा निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया है:-

“13. उपरोक्त सिद्धांतों के आलोक में और वादी के आचरण पर टिप्पणी करने के लिए अपीलार्थी द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण को ध्यान में रखते हुए, हम संतुष्ट हैं कि उन टिप्पणियों और निर्देशों की आवश्यकता नहीं है। यह स्थापित कानून है कि उन व्यक्तियों और प्राधिकारियों के विरुद्ध कठोर या अपमानजनक टिप्पणियां नहीं की जानी चाहिए जिनके आचरण पर न्यायालयों के समक्ष विचार किया जाता है जब तक कि प्रकरण के विनिश्चय के लिए यह उसके अभिन्न अंग के रूप में वास्तव में आवश्यक न हो। उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी के व्यक्तिगत/सेवा अभिलेख (सेवा पुस्तिका) पर उनके आदेश की प्रति रखने और आदेश की प्रति अधिकारी के निरीक्षण में न्यायाधीश के समक्ष अवलोकन के लिए रखने का निर्देश, वह भी उसे अवसर दिए बिना, निस्संदेह ही, उसके करियर को प्रभावित करेगा। उपरोक्त निर्देश के आधार पर, अपीलार्थी के कार्य शैली/क्षमता के बारे में प्रतिकूल निर्णय



लेने की पूरी संभावना है। हमारा मानना है कि अपीलार्थी के विरुद्ध की गई प्रतिकूल टिप्पणियां न तो उचित थी और न ही अपेक्षित।”

17. उच्चतम न्यायालय ने हाल ही में, अमर पाल सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य⁹, गुजरात राज्य बनाम न्यायमूर्ति आर. ए. मेहता (सेवानिवृत्त)¹⁰, ओम प्रकाश चौटाला बनाम कंवर भान¹¹ तथा उत्तर प्रदेश राज्य बनाम अनिल कुमार शर्मा¹² के मामलों में उपरोक्त कथित निर्णयों में प्रतिपादित विधि के सिद्धांत का अनुसरण किया है।

18. उच्चतम न्यायालय द्वारा पंकज चौधरी (पूर्वोक्त) के मामले में स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया गया है कि दोषपूर्ण/अवैध जांच के मामले में पुलिस अधिकारियों को सुनवाई का अवसर दिए बिना अपमानजनक टिप्पणी/अभियोजन शुरू करने का निर्देश पारित नहीं किया जाना चाहिए। न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया :-

“42. पुलिस अधिकारियों के विरुद्ध अपमानजनक टिप्पणियां करते हुए और उनके विरुद्ध अभियोजन का निर्देश देते समय, हमारे विचार में, उच्च न्यायालय अपमानजनक टिप्पणी करने से पहले विधि के सुस्थापित सिद्धांतों को ध्यान में रखने में विफल रहा है, जिन्हें न्यायालयों को नियंत्रित करना चाहिए। न्यायालय के समक्ष विचाराधीन व्यक्तियों के विरुद्ध विभागीय कार्रवाई/अभियोजन शुरू करने के लिए कोई भी अपमानजनक टिप्पणी और निर्देश उनके आधिकारिक करियर पर गंभीर प्रभाव डालेगा।

45. चूंकि उच्च न्यायालय ने 1997 की FIR No.-559 में जांच में शामिल पुलिस अधिकारियों के विरुद्ध उन्हें सुनवाई का अवसर दिए बिना उनकी आलोचना की है, इसलिए अपमानजनक टिप्पणी अपास्त किये जाने योग्य है इसे दरकिनार किया जा सकता है।”

19. ऊपर वर्णित निर्णय का संक्षिप्त विवरण यह दर्शित करता है कि यद्यपि न्यायाधीश को किसी भी मामले में अपने विचार व्यक्त करने का अप्रतिबंधित अधिकार है, किंतु न्यायाधीश का यह तत्संबंधी कर्तव्य है कि वह विशेष रूप से गवाहों या पक्षकारों के मामले में अनुपयुक्त और अवांछनीय टिप्पणी न करे, जो उनके सामने उपस्थित नहीं हैं, जो उनके चरित्र और प्रतिष्ठा को प्रभावित नहीं करते हैं, जब तक कि यह मामले के न्यायसंगत और उचित निर्णय के लिए बिल्कुल आवश्यक न हो और वह भी उस

9 (2012) 6 SCC 491

10 (2013) 3 SCC 1

11 (2014) 5 SCC 417

12 (2015) 6 SCC 716



साक्षी या पक्षकार को, जैसा भी प्रकरण हो, समझाने या प्रतिरक्षा करने का अवसर देने के बाद, न्यायिक निर्णयन न्यायिक प्रकृति के ही होने चाहिए और इसे वादी/पक्षकार के प्रति न्यायिक सम्मान प्रदर्शित करना चाहिए, जो अपने वाद/प्रकरण में न्यायालय के समक्ष आते हैं। यह भी सुस्थापित है कि यह न्यायालय अंतर्निहित या असाधारण अधिकारिता का प्रयोग करते हुए मोहम्मद नईम (पूर्वोक्त) में प्रतिपादित तीन मानदंडों(टेस्ट) के बाद अधीनस्थ न्यायालय द्वारा की गई उन टिप्पणियों को हटा सकता है, यदि ऐसा करना या न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकना या आपवादिक मामलों में न्याय के उद्देश्यों को प्राप्त करना वास्तव में आवश्यक है, जहां उन टिप्पणियों से साक्षी या पक्षकार को अपूरणीय क्षति हो सकती है, जो न्यायालय के समक्ष उपस्थित नहीं हैं, यह मानते हुए कि उन अनुपयुक्त टिप्पणियों को यथावत रखने से संदर्भित व्यक्ति को नुकसान होगा तथा इन टिप्पणियों के हटाने से न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

20. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित उपरोक्त सिद्धांतों के आलोक में, इस प्रकरण के तथ्यों पर वापस आते हुए, विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा पारित प्रतिकूल टिप्पणियां विधि द्वारा सुस्थापित सिद्धांतों के बिल्कुल विपरीत हैं। विद्वान मजिस्ट्रेट को जांच में विसंगतियों के लिए कोई प्रतिकूल टिप्पणी करने से पूर्व याचिकाकर्तागण को सुनने का उचित अवसर प्रदान करना चाहिए था।

21. विशेष रूप से, यह प्रत्यर्थीगण/ राज्य का कहना नहीं है कि याचिकाकर्तागण को उन परिस्थितियों को समझाने का अवसर दिया गया था और इसी तरह, इस तरह की प्रतिकूल टिप्पणियां प्रकरण के न्यायपूर्ण निर्णयन के लिए न तो आवश्यक थीं और न ही न्यायसंगत थीं। अतः, विचारण न्यायालय द्वारा अपने निर्णय में की गई अपमानजनक टिप्पणियां मोहम्मद नईम और पंकज चौधरी (पूर्वोक्त) के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायधिपतिगण द्वारा दिए गए निर्णयों का उल्लंघन है, और इस प्रकार, उन टिप्पणियों को यथावत रखने से उनको विधिक क्षति कारित होगा और याचिकाकर्तागण के सेवा कैरियर (काल) में यह परिणाम प्रदर्शित होगा और तदनुसार प्रतिकूल टिप्पणी अनुचित होने के कारण न्यायहित में हटा दी जानी चाहिए।



22. उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित उपरोक्त सिद्धांतों का पालन करते हुए, हम इस रिट याचिका को स्वीकार करने के इच्छुक हैं। परिणामस्वरूप, छत्तीसगढ़ राज्य बनाम अमृत लाल पैकरा के मामले में विचारण मजिस्ट्रेट द्वारा दिनांक 20.06.2019 को कण्डिका- 26 में की गई प्रतिकूल टिप्पणियों का निष्कासन किया जाता है। कारण बताओ नोटिस (अनुलग्नक पी-5) के आधार पर विभागीय जांच प्रारम्भ करने और तत्संबंधित पश्चातवर्ती कार्यवाही को निरस्त किया जाता है।

23. दोनों रिट याचिकाओं को यथा उपरोक्तदर्शित सीमा तक स्वीकार किया जाता है।

सही/ -
(संजय के. अग्रवाल)
न्यायाधीश

सही/ -
(राकेश मोहन पांडेय)
न्यायाधीश

एकेएस

-----00-----

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।